ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-4* Issue-2* May- 2019
Anthology : The Research

वृद्धजनों के सामाजिक समायोजन पर परिवर्तित होते सामाजिक मूल्यों का प्रभाव

सुषमा पेंढ़ारकर
प्राध्यापक,
समाजशास्त्र विभाग,
शासकीय महाविद्यालय, बरगी,
जबलपुर (म.प्र.)

सारांश

समाज की संरचनात्मक व्यवस्था में मूल एवं आधार स्तम्भ के रूप में वृद्ध व्यक्तियों की अहम भूमिका है। बुजुर्ग व्यक्ति जीवन के अंतिम पड़ाव में अनेक अनुभवों के साथ एवं विभिन्न परिस्थितियों को समझने की पारखी क्षमता के साथ समाज के विकास के नए आयामों के प्रति धारणाएँ बनाते हैं। उत्तर आधुनिकता की ओर अग्रसर होते समाज में नवीन वैचारिकी एवं मूल्यों का समावेष समाज की संरचनात्मक व्यवस्था को निर्धारित करते हैं। निरंतर परिवर्तित होते सभी सामाजिक मूल्य वृद्धावस्था के व्यक्तियों के लिए प्रायः स्वीकार्य नहीं होते किन्तु विरोध की अक्षमता के कारण नवीन परिस्थितियों को मान्य किया जाता है। निरंतर वृद्धि को प्राप्त होती षारीरिक, मानसिक, सांवेगिक, षिथिलता सामाजिक कर्त्तव्यों के निर्वाह एवं सहभागिता को प्रभावित करती है जो वृद्धजनों में असुरक्षा को बढ़ाती है एवं पर निर्भरता को निर्मित करती है। वृद्धजन अपनी विभिन्न अवस्थाओं में युवा वृद्ध, वृद्ध वृद्ध ,अति वृद्ध के स्तरीकृत आयु में समायोजन संबंधी परिस्थिति का सामना करते हैं।

मुख्य शब्द : समायोजन, सामाजिक मूल्य, सामाजिक अलगाव, सामाजिक एकाकीपन।

प्रस्तावना

वृद्धजन शब्द संपूर्ण विष्व में व्यवहृत है। वृद्ध एक अवस्था और जीवन के अंतिम क्रम की विशेषताओं का प्रतीक है। वृद्धावस्था का होना मानव की बेहतर जीवन प्रत्याषा का परिणाम है। युवा एवं मध्यम आयु के बाद के जीवन की अवधि सामान्यतः षारीरिक एवं मानसिक क्षमता, सांवेगिक नियंत्रण एवं सामाजिक सहभागिता की स्थिति में गिरावट के अन्तर्गत आती है। वृद्धजनों में पुनर्निमाण की क्षमता सीमित और रोगों से प्रभावित होने की संभावनाएँ अधिक होती है क्योंकि युवाओं व वयस्कों की तुलना में वे अषक्त होते हैं। वृद्धजनों को वरिष्ठ नागरिक के संबोधन से संबोधित किया जाता है विषेषतः ब्रिटेन व अमेरिका में। वृद्धावस्था को अधिकाधिक प्रचलित रूप में तथा नवीन आयामों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यद्यपि इसे सार्वभौमिक रूप से परिभाषित करना कठिन है क्योंकि यह अनेक अवधारणाओं के अनुसार नए रूपों में परिवर्तित होती है। संयुक्त राष्ट्र ने 60+ वर्ष को वृद्धावस्था का द्योतक माना है और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर वृद्धावस्था को परिभाषित करने का उसका यह पहला प्रयास भी था। U.N.O. ने 50 वर्ष की आयु को वृद्धावस्था की आरम्भिक आयु माना है। इस संदर्भ में यह मान्य किया है कि विकसित राष्ट्रों में वृद्धावस्था की जो परिभाषा दी है उसमें नयी भूमिकाओं के साथ पहले की भूमिका का ह्रास और समाज में सक्रिय भूमिका निभाने की अक्षमता प्रमुख रूप से सम्मिलित है। अधिकांष पष्चिम राष्ट्रों ने 60–65 वर्ष की आयु को सेवा निवृत्त और सामाजिक कार्यक्रमों की अक्षमता माना है। इसके अलावा बढ़ती जीवन प्रत्याषा के तत्वों के कारण 80 वर्ष और इससे भी अधिक आयु के अनेक लोग प्रभावित हो रहे हैं जो वृद्धावस्था की पुरानी

परिभाषा को बदल रहे हैं। अपने प्रचलित रूप में वृद्ध, वरिष्ठ नागरिक अथवा सीनियर सिटिजन के रूप में परिचित होते हैं। युवा समूह एवं अन्य आयु समूह के व्यक्ति इन्हें उम्र के सन्दर्भ में समझते हैं। वृद्धजनों में पुनः निर्माण की क्षमता का कम होना एवं रोगों से प्रभावित होने की सम्भावनाओं का अधिक होना अनेक समस्याओं का कारण होता है। वृद्धों के स्वास्थ्य से संबंधित अध्ययन को जेरिएटिक्स (Geriatrics) तथा वृद्धजन अध्ययन शास्त्र को जेरान्टोलॉजी (Gerontology) कहा जाता है। वृद्धजनों के संबंध में अनुसंधान के विकास प्रयोजन को प्रमुखता देते हुए यू.एन.ओ. एवं अन्तर्राष्ट्रीय जेरान्टोलॉजी (Gerontology) समिति ने संयुक्त रूप से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर वृद्धजनों के प्रोत्साहन के प्रति योजना बनाने एवं क्रियान्वयन के उद्देष्य से सन् 2002 में मेड्रिड स्पेन में द्वितीय विष्व सम्मेलन किया जिसमें प्रमुख रूप से जेरान्टोलॉजिक वैज्ञानिक अध्ययन के द्वारा प्राप्त निर्देषों के अनुसार वृद्धों के प्रति नीतियॉ बनाना एवं उनका क्रियान्वयन किया जाना सुनिष्चित किया गया। जेरान्टोलॉजिक अध्ययनों के आधार पर वृद्धावस्था को चार आयामों में समझा जा सकता है।

1. घटित होने के क्रम में संयोजित (Cronological)
2. मनोवैज्ञानिक (Psychological)
3- जैवकीय (Biological)
4- सामाजिक (Social)

युनाइटेड नेशन्स पोपुलेशन फण्ड एवं हेल्प ऐज इंडिया ने 1 अक्टुबर को अंतर्राष्ट्रीय वृद्धजन दिवस घोषित किया है। वृद्धजनों की जनसंख्या का वर्तमान एवं भविष्यत परिदृश्य वृद्धावस्था के प्रति ऐसी आपातिक आवश्यकता को निर्मित करता है जिसमें विभिन्न मुद्दों की ओर प्रमुखता से ध्यान दिया जाना, उत्तम नीतियों को बढ़ावा देना एवं वृद्धजनों के प्रति विशेष प्रकार का व्यवहार किया जाना सम्मिलित है। वृद्धावस्था से जुड़े विभिन्न मुद्दों को समझने के लिए उनकी आर्थिक, सामाजिक, शारीरिक, मानसिक एवं सांवेगिक अवस्थाओं का विष्लेषण करना प्रमुख है।

वृद्धजनों की औसत आयु बढ़ने से सम्पूर्ण विष्व में इनकी जनसंख्या बढ़ी है और वृद्धावस्था को वैष्विक स्तर पर सामाजिक, आर्थिक एवं मानवीय मुद्दा माना जाने लगा है। विकसित देषों में जीवन प्रात्याषा की वृद्धि से बढ़ते वृद्धजनों को एक समस्या के रूप में देखा जा रहा है। इस स्थिति को पीटर जी पीटरसन ने ग्रे डाउन (Gray Down) की संज्ञा दी है। इस परिप्रेक्ष्य में भारत की स्थिति चिंताजनक है। संयुक्त राष्ट्रकोष का यह आकलन है कि वर्ष 2050 तक सम्पूर्ण विष्व में प्रत्येक छः सर्वाधिक बुजुर्गो में से एक भारत का निवासी होगा।

जानांकिकीय के अनुसार युनाइटेड नेशन्स पापुलेशन फन्ड एवं हेल्पएज इंडिया ने 1 अक्टूबर को अंतर्राष्ट्रीय वृद्धजन दिवस घोषित किया है साथ ही 2011 तक वृद्धजनों की जनसंख्या 90 मिलियन होगी जो 2026 तक 173 मिलियन बढ़ने की घोषणा की गई थी। ऐसी घोषणा के साथ यह भविष्यवाणी भी की गई कि 90 मिलियन वृद्धों में से 30 मिलियन जनसंख्या अकेले जीवन यापन करेगी एवं 90% जनसंख्या जीविका के लिए कार्य करेगी। 2001 की जनगणना के अनुसार भारत में वृद्धों की निर्भरता का अनुपात कुल 13.1 प्रतिशत है। पुरूषों में 12.5 प्रतिशत तथा महिलाओं में 13.8 प्रतिशत है साथ ही निर्भरता का प्रतिशत शहर (11.5%) की तुलना में ग्रामीण क्षेत्र में (13.8%) ज्यादा है। यू.एन.पी.एफ. के अनुसार अनुमानतः 2050 तक 80% वृद्धजन विकासषील देषों में रहेंगे। जिसमें चीन और भारत का योगदान एक तिहाई होगा। भारत चीन के बाद दूसरा सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश है जिसमें 2026 तक 137 मिलियन वृद्धों की जनसंख्या होगी एवं तीन चौथाई वृद्धों की जनसंख्या गॉव की होगी। वृद्धजनों की वार्षिक दर अधिकतम 3% होगी जो कुल जनसंख्या वृद्धि दर का 9% है। 2001 की जनगणना के अनुसार वृद्धों की जनसंख्या 77 मिलियन तथा लिंग अनुपात 1029 है। जो 2016 तक 1031 तक होने की सम्भावना है। 1901 में 60 वर्ष की आयु में जीवन प्रत्याषा जो 9 वर्ष की थी , वह पुरूषों में 16 वर्ष तथा महिलाओं में 18 वर्ष बढ़ गई है। वृद्धजनों की षिक्षा का स्तर एवं कार्यषीलता की विशेषता में पुरूषों में शिक्षा का स्तर 52% एवं महिलाओं में मात्र 21% है कुल कार्यशील जनसंख्या का 90 प्रतिशत असंगठित क्षेत्रों में कार्य करता है। जिसके परिणाम स्वरूप सेवानिवृत्ति के बाद की आर्थिक लाभ लेने से वंचित हो जाते हैं साथ ही वृद्धों की कुल जनसंख्या का एक तिहाई भाग गरीबी रेखा के नीचे है। जनसंख्या की वर्तमान स्थिति यह प्रदर्शित करती है कि 2050 तक भारत में वृद्धों की जनसंख्या 0–14

वर्ष की आयु के बच्चों की तुलना में आषा से अधिक होगी। 2011 की जनगणना के अनुसार 10.38 करोड़ वृद्धजनों की जनसंख्या है जो कुल आबादी का 8. 58% है। वृद्धजनों की जनसंख्या का 64% वृद्ध महिलाएँ तथा 40% वृद्ध पुरूष अपनी मूलभूत आवष्यकताओं के लिए दूसरों पर आश्रित होते हैं।

वृद्धजनों का जनांकिकीय परिप्रेक्ष्य सामाजिक परिस्थितियों के साथ समायोजन की स्थिति निर्मित करता है। अपने सम्पूर्ण जीवनकाल में संचित अच्छे व बुरे अनुभव जो वांछित एवं अवांछित परिणामों को जन्म देते हैं। वृद्धावस्था के व्यवहारों को निर्धारित करते प्रतीत होते हैं। सामाजिक समायोजन वर्तमान एवं भविष्य की सामाजिक परिस्थितियों का निर्धारण करते हैं। परिस्थितियों के अनुकूल चलना या परिस्थिति को अपने अनुकुल बना लेना समायोजन है। पहला विकल्प वांछित एवं व्यक्ति की योग्यता एवं क्षमताओं का द्योतक है और दूसरा अवांछित एवं व्यक्ति की कमजोरी अथवा अक्षमता को स्पष्ट करता है। मनोवैज्ञानिक गेट्स एवं अन्य (1966) के अनुसार ''समायोजन जीवन की निरंतर गतिमान या गतिषील प्रक्रिया है जिसके माध्यम से व्यक्ति अपने एवं पर्यावरण के बीच उपयुक्त संतुलन संबंध स्थापित करने के लिए अपने व्यवहारों में परिवर्तन करता है।'' समायोजन एक महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक प्रत्यय है क्योंकि प्रत्येक जीवित प्राणी के सामने कुछ न कुछ समस्याएँ अवष्य आती है। व्यक्ति का समायोजन कितना प्रभावषाली है यह उसकी समस्याओं से ज्ञात नहीं होता बल्कि व्यक्ति इन समस्याओं व जीवन की चुनौतियों को किस रूप में स्वीकार करता है इस बात से स्पष्ट होता है। समायोजन में ग्रहणषीलता, लगाव की प्रेरणा, संतुलित जीवन, अनुभव से लाभ उठाने की योग्यता, सहनषीलता, सामंजस्य भाव एवं वस्तुनिष्ठता आदि का गुण पाया जाता है। व्यक्ति अपने संपूर्ण जीवन काल में समायोजन अथवा सामंजस्य की स्थितियों का सामना करता है। उसे जीवन की प्रत्येक अवस्था में भिन्न परिस्थितियों के साथ कम व अधिक समायोजन करना ही होता है। समायोजन से सकारात्मक स्थिति निर्मित होती है। समायोजन का स्वरूप, अवधि प्रभाव (सकारात्मक, नकारात्मक) व परिणाम व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्धारण करते हैं। स्पष्टतः व्यक्ति अपने जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में समायोजन की बारम्बारता व तीव्रता से प्रभावित होता है। बाल्यावस्था की आवष्यकताएँ व उसकी पूर्ति का माध्यम व अवधि से संबंधित बाधक परिस्थितियॉ समायोजन के स्वरूप का निर्धारण करती हैं जो बालक के व्यक्तित्व का निर्धारण करने का पहला पायदान होता है। समायोजन में स्वयं को बदलने की बारम्बारता अन्तर्मुखी अथवा भीरू स्वभाव के व्यक्तित्व को जन्म देती है ठीक इसके विपरित परिस्थितियों के विरोध में उग्र व उत्तेजित स्वभाव वाला और समाज विरोधी मानसिकता वाले व्यक्तित्व का निर्माण होता है जो आगे की अवस्थाओं में समायोजन की परिस्थितियों के प्रति निर्णय लेने के लिए प्रभावशाली होते हैं। जो व्यक्ति अपने जीवन में परिस्थितियों को बदलने की क्षमता रखता है वह बहिर्मुखी, उत्साही, साहसी एवं सकारात्मक विचार वाला व्यक्तित्व होता है। बाल्यावस्था का सामाजिक व्यक्तित्व किशोरावस्था में विकसित रूप में होता है सांवेगिक, मानसिक, शारीरिक व सामाजिक विकास की तीव्र प्रभावी अवस्था में समायोजन की पृष्ठ भूमि भी परिवर्तित होती है जो प्रायः व्यक्तित्व को नया मोड़ देती है। युवावस्था की विषिष्ट विषेषताएं प्रमुखतः सामाजिक मुल्यों में परिवर्तन करना, रूचियों में परिवर्तन, सामाजिक विकास की दिशा निर्धारण करना अपनी आवष्यकताओं व विकास के प्रति अधिक सजगता आदि समायोजन की नयी परिस्थितियों को जन्म देती हैं जो वयस्क अवस्था तक कम व अधिक प्रमाण में व बारम्बारता के रूप में व्यक्ति के जीवन के साथ जुड़ते जाते हैं। प्रायः बाल्यावस्था, किशोरावस्था, युवावस्था व वयस्क अवस्था में व्यक्ति के जीवन में अनेक परिस्थितियॉ अलग अलग सामाजिक समायोजन की परिस्थितियों को निर्धारित करती हैं जो जीवन काल की अंतिम अवस्था में व्यक्ति के व्यक्तित्व का अंग हो जाती हैं। प्रायः यह देखा गया है कि जो व्यक्ति अपने जीवन काल में संघर्षशील परिस्थितियों का सामना अधिक करता है व स्वयं को उसके अनुरूप ढालता है वह वृद्धावस्था में भी उसी प्रक्रिया को दोहराता है लेकिन इसके विपरित जो व्यक्ति संघर्षशील परिस्थितियों का मुकाबला करने में समर्थ होता है वह वृद्धावस्था में क्षमताओं के अभाव में भी उन्हीं प्रयासों को अपनाना चाहता है जिसमें प्रायः वह असफल हो जाता है यह असफलता ऐसे व्यक्तियों में निराषा को जन्म देती है और इनका आग्रह अपने से संबंधित व्यक्तियों को अपने अनुसार कार्य करने के

लिए होता है। पीढ़ियों का अन्तराल इसमें बाधक सिद्ध होता है। नए मूल्य एवं नयी सामाजिक व्यवस्थाएँ प्रतिमानों को प्रश्रय देने वाली युवा पीढ़ी व वयस्क पीढ़ी प्रायः बुजुर्गों के इस आग्रह से सहमत नहीं होते परिणामतः परस्पर सामाजिक दूरी का कारण बनते हैं।

वृद्धजनों में सामाजिक समायोजन को समझने के लिए वृद्धावस्था की विषेषताओं को समझना आवश्यक है। इनमें प्रमुख हैं –

1. वृद्धावस्था में 60+ की उम्र सम्मिलित है।
2. वृद्धावस्था शारीरिक मानसिक सांवेगिक क्षीणता की अवस्था है।
3. वृद्धावस्था में शीघ्र परिवर्तन स्वीकार्य नहीं होता।
4. वृद्धावस्था अनुभवों के आधार पर परिस्थितियों को समझने की अवस्था है।
5. वृद्धावस्था सामाजिक एकाकीपन व अलगाव की अवस्था है।
6. वृद्धावस्था त्यागमय जीवन की अवस्था है।
7. वृद्धावस्था पूर्ण निर्भरता की अवस्था है।
8. वृद्धावस्था में पुनः निर्माण के क्षमताओं का सीमित होना।
9. अनेक रोगों से प्रभावित होने की संभावनाओं का अधिक होना।
10. समाज में परिवर्तित होते सामाजिक मूल्यों के प्रति समायोजन पूर्ण व्यवहार करना।

समाज में स्थापित एवं विस्तारित होते सामाजिक मूल्य अपनी उपयोगिता के आधार पर स्थायी एवं परिवर्तित स्वरूप प्राप्त करते हैं। समाज में परिवर्तित होते सामाजिक मूल्यों का सर्वाधिक प्रभाव वृद्धजनों के समायोजित व्यवहार पर पड़ता है। मूल्यों के विषय में राधाकमल मुकर्जी ने दो मूलभूत मुद्दों पर ध्यान आकर्षित किया है। प्रथम, मूल्य, धर्म व राजनीति तक ही सीमित नहीं है बल्कि अलग–अलग क्षेत्र के अलग–अलग मूल्य भी होते हैं जैसे आर्थिक मूल्य, सामाजिक मूल्य, वैधानिक मूल्य, षैक्षणिक मूल्य, नैतिक मूल्य, परिस्थितिकी मूल्य आदि। जीवन के विभिन्न पक्षों से जुड़े मूल्यों में आपस में एक प्रकार्यात्मक संबंध होता है जिसके परिणाम स्वरूप समाज में संतुलन और व्यवस्था बनी रहती है द्वितीय, मूल्य आत्मिक अथवा व्यक्तिपरक आकांक्षाओं का परिणाम नहीं होते बल्कि यह मूल्य हमारी आकांक्षाओं और इच्छाओं में समाविष्ट होते हैं अर्थात् मूल्य सामान्य व विषिष्ट दोनों प्रकार के होते हैं। मूल्यों को पारिभाषित करते हुए आर.के मुकर्जी ने लिखा है कि मूल्य समाज द्वारा स्वीकृत ऐसी इच्छाओं की ओर लक्ष्य है जिसका आन्तरीकरण, अनुकूलन सीखने या समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा होता है। मूल्य व्यक्तिपरक वरीयताओं, मानकों और आकांक्षाओं का रूप धारण कर लेते हैं। मूल्यों में वैयक्तिकता की विषेषता देखने को मिलती है सभी लोग अपनी रूचियों, क्षमताओं, आदतों और आवष्यकताओं के अनुसार विभिन्न मूल्यों की संतुष्टि अलग–अलग प्रकार से करते हैं। मूल्यों का स्त्रोत व्यक्ति की अन्तर्दृष्टि, परानुभूति तथा पारस्परिक सहयोग है। जिन व्यक्तियों में यह गुण जितने अधिक होते हैं वे मूल्यों का उतना ही अधिक आन्तरीकण करने व उन्हें दूसरों तक पहुँचाने मे उतना ही अधिक सफल हो जाते हैं।

वृद्धजनों के सामाजिक समायोजन में मूल्यों के प्रभाव को अन्तर्विषयक दृष्टिकोण में जनांकिकीय, शारीरिक, सामाजिक, आर्थिक, मानसिक एवं सांवेगिक आयाम के रूप में समझा जा सकता है।

शारीरिक आयाम

आयु के घटते कालक्रम में व्यक्ति के कार्य करने की क्षमता व कार्यषील आयु में महत्वपूर्ण अन्तर पाया जाता है। वृद्धावस्था में चिन्हित विशेषताएँ सामान्यतः पूर्ण पंचेन्द्रियों की क्रियाएँ विभिन्न व्यक्तियों में भिन्न समय में व भिन्न दर से पायी जाती है। वृद्धजनों में क्रमशः बढ़ती शारीरिक दुर्बलता एक महत्वपूर्ण लक्षण है जो अनेक बीमारियों की सम्भावनाओं को बढ़ाता है। बढ़ती शारीरिक अक्षमता वृद्धजनों में मानसिक एवं सामाजिक परिवर्तन को निर्मित करता है। प्रायः 80+ के वृद्धों में निर्मित होती षिथिलता उनके बाह्य गतिविधियों में बाधक होती है। परिणामतः उनमें अलगाव अथवा एकाकीपन का भाव निर्मित होता है। जो उनके भावों में परिलक्षित होता है। यह शारीरिक क्षीणता वृद्धजनों में परनिर्भरता को बढ़ाता है।

सामाजिक आयाम

वृद्धजन का परिचय परिवर्तन की कठिन परिस्थितियों से गुजरने का होता है। आज वे स्वयं अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण कर रहे हैं एवं क्रियाषील जीवन जी रहे हैं। उनके परिवार एवं समुदाय उन्हें बढ़ावा दे रहे हैं। यह परिवर्तन उनके

जीवन में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव डालते हैं। सामाजिक एकीकरण और वृद्धों की समाज में सहभागिता की बारम्बारता, स्वस्थ एवं उत्पादक वृद्धावस्था के सूचक के रूप में देखे जा सकते हैं और यह व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है कि सामाजिक आधार एक सशक्त रक्षक के रूप में व्यक्ति के स्वास्थ्य पर प्रभाव डालता है। वृद्धजनों में सकारात्मक जीवन की वैचारिकी इसका उदाहरण है किन्तु अधिकांश वृद्ध विशेषतः 80+ की आयु के वृद्धों में सामाजिक एकाकीपन एवं अलगाव की स्थिति निर्मित होती है। परिवार में, मित्र समूहों के द्वारा एवं अन्य सम्बन्धितों के द्वारा किए जाने वाले व्यवहार जो सम्मान पूर्वक होते हैं एवं वृद्धों के प्रति चिंता करने वाले होते हैं फिर भी बड़ी संख्या में वृद्धजन एकाकी व अकेलेपन का जीवन जी रहे हैं। इसके अनेक कारण हैं जैसे जीवन साथी की मृत्यु, घनिष्ठ मित्र का बिछड़ना, सेवानिवृत्ति, अस्वस्थता आदि। वृद्धजनों में सामाजिक एकाकीपन एक जोखिम भरा कारक है। संबंधों एवं सामाजिक क्रियाशीलता अथवा सक्रियता एवं इससे संबंधित भावनाओं की कमजोरी सामाजिक एकाकीपन है। सामाजिक एकाकीपन तथ्यों पर आधारित है इसलिए इसका मापन किया जा सकता है। साथ ही परस्पर घनिष्ठता से जुड़े लोगों में सामाजिक अन्तः क्रिया एवं व्यक्ति निष्ठता पूर्ण अध्ययन की अवधारणा भी प्रयुक्त की जा सकती है जिनमें अनेक अवधारणाएँ जैसे सामाजिक आधार, सामाजिक अलगाव, सामाजिक रूप से परस्पर जुड़े लोग (सोशल नेटवर्क), सामाजिक वातावरण एवं सामाजिक संगठन (एक साथ जुड़े रहने की योग्यता) आदि महत्वपूर्ण है। सामाजिक एकाकीकरण की तरह सामाजिक अलगाव अथवा पृथक्करण की स्थिति वृद्धावस्था में निर्मित होने वाली सामान्य स्थिति है। सामाजिक अलगाव अर्थात् सामाजिक भागीदारी अथवा कार्यक्रमों में सहभागी न होना या अक्षमता महसूस करना। प्रचलित सामाजिक व्यवस्थाओं के अनुरूप स्वयं को न ढाल पाना अथवा इच्छा का न होना सामाजिक अलगाव की स्थिति को जन्म देता है। सामाजिक अलगाव संवेगात्मक अथवा मनोवैज्ञानिक चुनौतियॉ एवं विद्यमान गुण एवं क्षमताओं के लक्षणों पर निर्भर करता है। अलगाव, अकेलेपन एवं अवसाद के भाव से, अन्य व्यक्तियों के दुर्व्यवहार के भय से बचने के लिए एवं स्वयं के प्रति नकारात्मक धारणा से बढ़ता है। अलगाव व्यक्ति का अपने समूह से पृथक्करण को सूचित करने वाली स्थिति है। समूह या व्यक्ति से अंतःसम्बंध न रखना व समूह में सहभागिता न देना आदि स्थिति अलगाव को दर्शाती है। अधिक मात्रा में अलगाव मानसिक दुर्बलता को निर्मित करता है। सामाजिक एकाकीपन एवं अलगाव की स्थिति के लिए शारीरिक शिथिलता के साथ–साथ जीवन साथी की अनुपस्थिति से जुड़े मुद्दे महत्वपूर्ण कारक हैं। इसके अतिरिक्त सामाजिक, सांस्कृतिक परिवेष में प्रचलित मूल्यों के प्रति वैचारिकी भी प्रभाव पूर्ण कारक है। वैश्विक परिवेश में नवीन मूल्यों का निर्माण एवं सामाजिक अभिमति में तीव्रता यह दोनों ही स्थितियॉ प्रत्येक आयु समूह के व्यक्तियों से व्यवहारिक प्रतिमानों में परिवर्तन की मॉंग करती हैं। वयोवृद्ध अवस्था में सामाजिक मूल्यों के साथ समायोजन करने में कठिनाई होती है। सामाजिक सांस्कृतिक दषाओं में जब कभी परिवर्तन होता है उसका प्रभाव मूल्यों की संरचना पर पड़ता है। समाज, परिवार, विवाह, आर्थिक व्यवहार आदि के संबंध में अनेक नए मूल्य स्थापित हुए जिनके प्रति सामाजिक अभिमति का प्रमाण कम व अधिक रहा। वृद्धजनों के द्वारा समाज के महत्वपूर्ण संस्थाओं में होने वाले तीव्र परिवर्तनों के प्रति सकारात्मक अनुकूलता नहीं पायी जाती। परिवर्तित मूल्यों का आंतरीकरण वे समाज व व्यक्ति से सामंजस्य बनाये रखने के लिए करते हैं। आधुनिक समय में सामाजिक मूल्यों से समायोजन करना एवं स्वयं में परिवर्तन करना अनिवार्य होता है। जिसे वृद्धजन सामन्यतः स्वीकार नहीं करते। व्यक्ति और समाज में मूल्यों का जितना आंतरीकरण होगा उतना ही अधिक समंजस्य स्थापित होगा। इस परिप्रेक्ष्य में परिवार, मित्र समूह एवं अन्य संस्थाओं की भूमिका प्रमुख होती है।वृद्धों में सामाजिक एकीकरण एवं अलगाव की स्थिति पर उनकी आवासीय स्थिति का भी प्रभाव पड़ता है अधिकांश वृद्ध अपने जीवन साथी के साथ अकेले रहना पसंद करते हैं। नगरीय क्षेत्रों में पिछले दशक में आवासीय स्थिति में अधिक वृद्धि हुई है किन्तु निवास करने वाले व्यक्ति की औसत संख्या में गिरावट आयी है। सुमंगला (2003) के अध्ययनों के परिणाम के अनुसार वृद्धजन अपने जीवन साथी के साथ या अविवाहित संतान के साथ रहना पसंद करते हैं साथ ही एक ही परिसर में अपने अविवाहित

संतान के साथ पृथक रूप में रहते हैं।नायर (1950) ने वृद्धजनों की आवासीय स्थिति का एवं समायोजन के साथ गहरा संबंध बताया है। मनोवैज्ञानिक रूप से आनंदमय एवं दुखी जीवन के सर्वे में शर्मा(1971) ने यह निष्कर्ष निकाला कि व्यस्त जीवन, अच्छा स्वास्थ्य, आर्थिक स्थायित्व एवं जीवन साथी का होना, सामाजिक सम्पर्क पर निर्भर करता है।

मनोवैज्ञानिक एवं सांवेगिक आयाम

वृद्ध व्यक्ति अपने जीवन के अंतिम पड़ाव में संवेगात्मक रूप से षिथिलता अनुभव करता है। आनन्द एवं दुखदायी परिस्थितियों के प्रति संवेगात्मक नियंत्रणात्मक व्यवहार में कठिनाई का अनुभव करते हैं क्रमषः चिड़िचिड़ापन, क्रोध,अतिभावुकता, घृणा को प्रकट करना आदि व्यवहारों पर नियंत्रण कम होता है। वृद्धावस्था में नवीन सामाजिक मूल्यों के प्रति प्रत्यक्षतः विरोध की स्थिति भी परिलक्षित होती है जो पूर्व स्थापित मान्यताओं की सुरक्षा के संदर्भ में होते हैं किन्तु असफलता के कारण संवेगों का प्रकटीकरण होता है जो प्रायः असंतुलित परिस्थितियों को जन्म देते हैं। इसी प्रकार मानसिक क्षीणता जैसे स्मरण शक्ति का ह्रास, विचार करने की क्षमता का कम होना आदि सम्मिलित हैं। चेरियन (2003) ने इस संबंध में महत्वपूर्ण प्रभाव स्पष्ट किए है इनके अनुसार आवासीय व्यवस्था एवं संवेगात्मक समायोजन, लिंग एवं सामान्य समायोजन तथा संवेगात्मक एवं सामान्य समायोजन पर पारिवारिक जीवन संतुष्टि निर्भर करती है। शारीरिक एवं सांवेगीक क्षीणता उनके सामाजिक अलगाव व एकाकीपन का कारण बनती हैं। इसी प्रकार डिल्लन और डीसूजा (1992) के अनुसार ऐसी महिलाएँ जो कम क्रोधी होती एवं तनाव का अनुभव नहीं करती उनमें सामाजिक समायोजन पुरूषों से अधिक पाया जाता है।

आर्थिक आयाम

वृद्धजनों में समायोजन संबंधी प्रमुख कारक के रूप में आर्थिक आयाम जीवन के प्रति सकारात्मक एवं नकारात्मक विचारों को जन्म देते हैं। वर्तमान सामाजिक परिदृश्य में सेवा निवृत्ति के बाद भी लोगों में जीवकोपार्जन का कार्य करने की क्षमता होती है और वे किसी न किसी व्यवसाय में संलग्न रहते हैं एवं परिवार की आवश्यकताओं को पूर्ण करने का माध्यम बनते हैं। वृद्धावस्था के आरम्भिक कालक्रम में कार्य आयु की क्षमता के कारण जीवकोंपार्जन का कार्य सम्भव हो पाता है। किन्तु आयु के बढ़ते क्रम में यह क्षमता निरंतर कम होती है। जिससे निराषा का अनुभव होता है। शिवा राजू (2005), मुम्बई में देसाई और नाईक (1972), लखनऊ में सुदन (1975) उदयपुर से साती (1958) ने अपने अध्ययन के आधार पर इस तथ्य को स्पष्ट किया है कि सेवा निवृत्त व्यक्ति का अधिकांश प्रतिशत परिवार की आर्थिक स्थिति के लिए पुनर्व्यवसाय करता है किन्तु क्रमशः 75+ के बाद आर्थिक कार्यों में संलग्न रहना कठिन हो जाता है। जीवकोपार्जन की कार्यषक्ति की कमी के कारण आर्थिक असुरक्षा और इसके परिणाम स्वरूप निर्मित होने वाली सामाजिक सुरक्षा भी प्रभावित होती है। आयु के बढ़ते कालक्रम में युवा वृद्ध व्यक्तियों में जीवन साथी के प्रति चिंता का बढ़ना उनके प्रति किये जाने वाले ध्यान पूर्वक व्यवहारों से स्पष्ट होता है और वे संतान के प्रति आर्थिक उत्तरदायित्वों के विषय में चिंता न करते हुए संचित सम्पत्ति का पूर्ण उपभोग करने की विचारधारा रखते हैं। जो वृद्धजनों की सम्पन्नता का द्योतक है। निर्धन वर्ग के वृद्धजनों में जीवकोपार्जन की कार्य शक्ति की कमी उनकी सामाजिक एवं शारीरिक सुरक्षा को बाधित करती है।

निष्कर्ष

भारत में एक ओर जहॉ वृद्धों की संख्या तेजी से बढ़ रही है वहीं दूसरी ओर ओद्यौगीकरण, नगरीकरण, आधुनिकीकरण एवं पश्चिमीकरण से बच्चों में माता–पिता से जोड़े रखने वाले पुराने संस्कारों की बजाय नई सोच उभरने के कारण वृद्धों की स्थिति दयनीय होती जा रही है। वृद्धजन नई पीढ़ी के समाजीकरण तथा उनमें सामाजिक, सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों के ज्ञान व अनुभव को हस्तांतरित करने में महत्वपूर्ण योगदान देते रहे हैं किन्तु तकनीकि विकास के कारण नवीन पीढ़ी की जीवन पद्धति तथा मूल्यों में होने वाले परिवर्तनों ने वृद्धों की सामाजिक प्रस्थिति में काफी परिवर्तन किया है। वृद्धजनों में आयु के अनुरूप स्वयं को परिवर्तित करने की भावना क्रमषः विकसित होती है जो सकारात्मक परिस्थितियों को जन्म देती है। वृद्धों में उत्पन्न होने वाली क्षीणता का अनुभव केवल वृद्धजनों की समझ का विषय न होकर अन्य सदस्यों के लिए भी आवष्यक है जो उनके सर्म्पक में होते हैं। वृद्धजनों के विचारों एवं मूल्यों में परिवर्तन आसानी से नहीं होता बल्कि कुछ समयावधि

के बाद संभव होता है जो प्रायः अनैच्छिक होता है। यद्यपि नवीन समाजिक व सांस्कृतिक मूल्य को आधुनिकता की देन है परम्परागत सांस्कृति मूल्यों से पूर्णतः अलग नहीं होते बल्कि परम्परा का बेहतर तरीके से उपयोग करती है। सामाजिक मूल्यों की उत्पत्ति पारम्परिक एवं आधुनिक दोनों के बीच की अन्तःक्रिया का प्रतिफल है अर्थात् आधुनिकता परम्परा के अनेक विकल्पों में से अच्छे विकल्प चुनने की स्वतंत्रता देती है और ऐसे सांस्कृतिक प्रतिमानों को जन्म देने पर जोर देती है। जो नवीन व पुरातन समन्वय को प्रस्तुत करते हैं। परम्परागत मूल्य नवीन मूल्यों को नकारते नहीं है बल्कि यह एक दूसरे के सहयोग से ही क्रियाषील होते हैं। वृद्धजनों में एवं नवीन पीढ़ी में मूल्यों का सामंजस्य आवष्यक है। वृद्धजनों में आधुनिक मूल्यों के साथ समन्वय स्थापित करना आवष्यक है क्योंकि अपने सम्पूर्ण जीवनकाल में एक अवस्था विशेष में उन्होनें भी नवीन मूल्यों को स्वीकार करने का आग्रह किया होगा। आधुनिकता विस्तार उन्ययन गहनता और पुनर्जीवन का एक साथ प्रतिनिधित्व करती है जो सामाजिक विकास के लिए आवष्यक है।

सुझाव

वृद्धों की बढ़ती जनसंख्या का परिणाम अनेक चिंतनीय परिस्थितियों की सम्भावनाओं को व्यक्त करते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में सरकारी एवं स्वयंसेवी संगठनों के प्रयासों में उपयुक्त नीतिनिर्धारण एवं क्रियान्वयन पर विषेष ध्यान देने की आवष्यकता है। विशेषतः निर्धन वर्ग के वृद्धजनों की सामाजिक एवं आर्थिक सुरक्षा महत्वपूर्ण मुद्दा होना चाहिए।

वर्तमान समय में तीव्र गति से परिवर्तित होते सामाजिक मूल्यों से सामंजस्य स्थापित करने में उत्पन्न होने वाली कठिनाईयों का समाधान परम्परागत भारतीय आश्रम व्यवस्था के सामाजिक मूल्यों के रूप में पुनर्स्थापन आवश्यक है। आश्रम व्यवस्था में व्यक्ति के जीवन को 100 वर्ष का मानकर प्रत्येक 25 वर्ष के अनुसार चार भागों में विभाजित किया गया। निष्चय ही उस समय भी जीवन प्रात्याषा 100 वर्ष की आयु का कारण थी। व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास के सम्भावित दूरगामी परिणामों को दृष्टिगत रखते हुए इस व्यवस्था की उत्पत्ति हुई होगी। चार आश्रमों के प्रत्येक पड़ाव में समाज द्वारा निष्चित सामाजिक नियमों प्रतिमानों एवं मूल्यों के अनुसार व्यवहार करने का आग्रह था। वानप्रस्थ आश्रम वृद्धावस्था की तैयारी का आश्रम माना गया है। जिसमें आहार–व्यवहार में कमी लाना एवं त्यागमय जीवन व्यतीत करने के लिए स्वयं को तैयार करना प्रमुख रूप में सम्मिलित था अर्थात् जीवन मूल्यों को नए स्वरूप में स्वीकार करना जो उनकी शारीरिक एवं मानसिक क्षमताओं के अनुरूप हो। 75 वर्ष की आयु के पश्चात् पूर्णतः सांसारिक जीवन का त्याग करके समाज कल्याणकारी कार्यों में शामिल होना महत्वपूर्ण व्यवहार था। यद्यपि आधुनिक सामाजिक परिवेश में परिवर्तित होते सामाजिक मूल्य इन पारम्परागत मूल्य के साथ मेल नहीं रखते फिर भी परिस्थितियों के अनुसार विकल्पों के चयन में परम्परागत मूल्य उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। आज वृद्धजन समाज से यह मांग कर रहा है कि वे केवल उनकी स्वतंत्रता व सहभागिता को ही सुनिश्चित न करें बल्कि उनकी देखभाल,प्रतिपूर्ति एवं सम्मान भी दें।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *हरिकृष्ण रावत, समाज शास्त्रीय चिन्तक एवं सिद्वान्तकार – पृष्ठ क्रमांक 346 द्वितीय संस्करण – 2003 – रावत पब्लिकेशन*
2. *Central Statistical orguization, 2000. Elderly in India: Profile And programmes. Cheria.I.2003: Adjustment of the Elderly in Relation to livingArrangement: GenderAnd family life satisfaction. Ivdau Jaurval of Gerontology, Volume 17 (1&2)*
3. *Dhillon, P.K. & D Souza, S. 1992 the effect of Age And sex on needs socialAdjustmentAnd Reactions to Frustration. In P.K. Dhillion. Psycho-socialAspeets ofAgeing of India. New Delhi concept punlishing company*
4. *Gangrade, K.D. 1998 Social Network soud the Aged in India, In A.B. Bose & K.D.Cangrad (Eds) theAgeing in India problems And potentialities, New DelhiAbhinav publication*
5. *Gore MS 2000 Globalization And Ageing in Murali Desai & Siva Raju (Eds) Genonto-togical social work. In India: Some IssuesAnd perspectives. New Delhi: BR Publishing Corporation.*
6. *Ministry of StatisticsAnd programme Implementation. New Delhi: government in India.*

7. *Mukarjee, Radha kamal, 1949, The Social Structure of values. Laura E.Berk Development through the life span, (Allyu & Bacon,) 2010-607*
8. *OldAge, N.oxford English dictionary online, September 2013, Oxford University press*
9. *OldAge wikipedia the free encuclopedia*
10. *Phillips, Judith, KristineAjrouchAnd Sarah Hillcoat- Nall etamby, key concepts in social crerontology (SAGF E Publication, 2010) 12-13*
11. *Shiva Raju, S. 2006 FebrucaryAgeing in india in the 21st century:A ResearchA genda (PriorityAreasAnd Methodological Issues)*
12. *शर्मा जी.एल. 2015 – सामाजिक मुद्दे– रावत पब्लिकेशन जयपुर नई दिल्ली*
13. *Sharma K.L.2003 Health StatusAnd care Givers of Elderly Rural women. Indian Journal of Gerontology. Volume 17 (1&2)*
14. *शर्मा के.एल 2006 भारतीय सामाजिक संरचना एवं परिवर्तन–रावत पब्लिकेशन जयपुर नई दिल्ली*
15. *Social isolation from wikipedia the free encycbpedia-Artical October - 2012*